अथ

तत्व संहिता

अर्थात

तत्व विभाग

लेखक:—

पण्डित वामन चतुर्वेदी (मु० विशुनपुरा) पो० बसन्तपुर जिला छपरा निवासी ने बनाया

संशोधक

पं० श्री राम स्वरूप पाण्डे
पं० राम सूरत द्विवेदी

राजेन्द्र हाई ई० स्कूल हेड पंडित पहलेजपुर

प्रथमबार १०००] १९४८ [मूल्य ।=)

S. R. S. H. PRESS, MAHARAJGUNJ.

अथ

तत्त्व संहिता

अर्थात

तत्व विभाग

लेखकः--
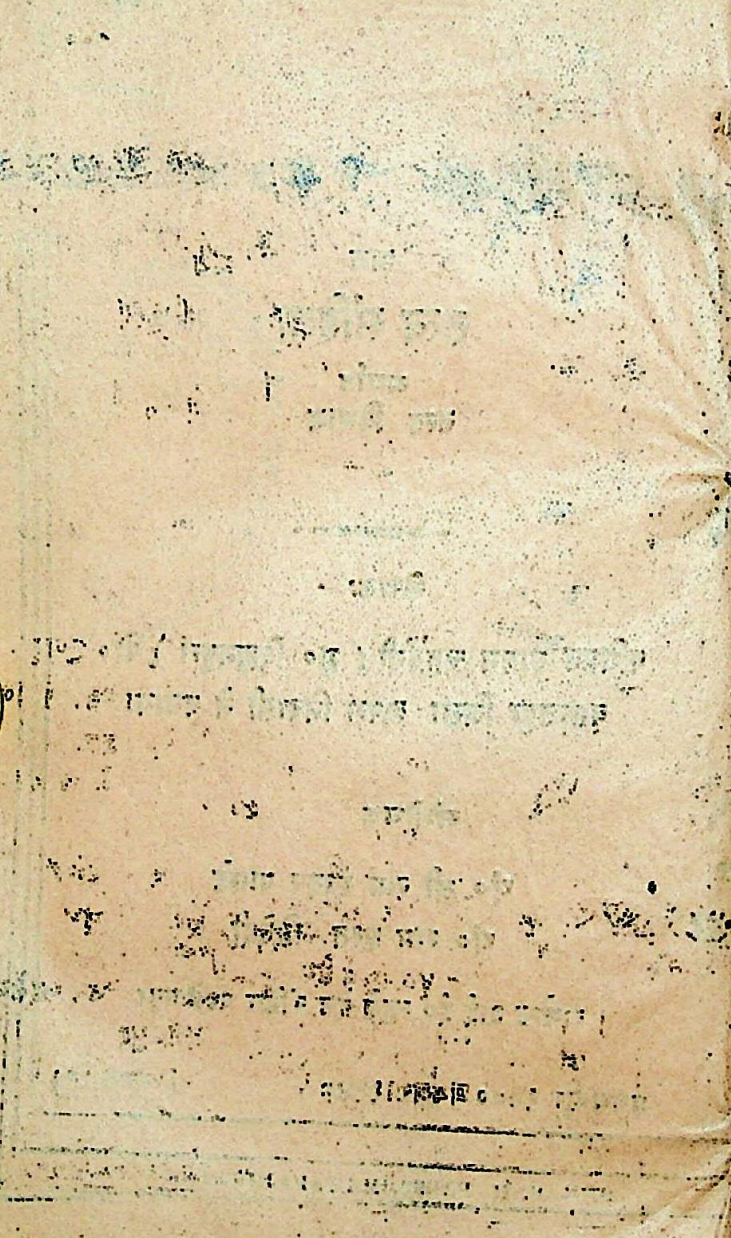
पण्डित वामन चतुर्वेदी (मु० पिशुनपुरा) पो० वसन्तपुर जिला छपरा निवासी ने बनाया ।

संशोधक

पं० श्री राम स्वरूप पाण्डे

पं० राम सूरत द्विवेदी

राजेन्द्र हाई ई० स्कूल हेड पंडित वहलेजपुर

प्रथमबार १००० सन् १९५८ [मूल्य ।≈)

अथ तत्व संहिता

श्री गणेशाय नमः

माता पितरौ बन्दे पार्वती परमेश्वरौ, मुमुक्षुणां हितार्थाय। लिख्यते तत्व संहिता ॥१॥

❀ भूमिका ❀

हे प्रिय सज्जनों इस पुस्तक में कर्म उपासना तथा तत्व ज्ञान विषय यथार्थ रुप से संक्षेप में दिखाया गया है। इसमें कोई बात कल्पित तथा अत्युक्ति युक्त नहीं है इसलिये जो मनुष्य मुक्ति के प्रेमी हो अथवा जिन महाशयों को जिज्ञासा होय कि आत्म ज्ञान का वास्तविक तत्वज्ञान का स्वरुप क्या है और परम गति कैसे मिल सकती है। उनको इस ग्रंथ को अवश्य पढ़ना चाहिये और इस ग्रंथ के कथनानुसार चलने से अवश्य मुक्ति मिलेगी इसमें कोई सन्देह नहीं है। जो विद्वान और तत्वज्ञान के प्रेमी होगें वे लोग इस ग्रंथ को आदर करेंगे। जो लोग शास्त्र की मर्यादा को नहीं मानते हैं और रात दिन सांसारिक कार्यों में मग्न हैं उन महाशयों के देखने योग्य यह ग्रंथ नहीं है। मैं तो कोई पण्डित नहीं हूँ किन्तु जो कुछ महात्माओं के द्वारा मुझे प्राप्त है तथा अपने से जो कुछ मुझे मालूम हो गया है श्रीमानों की सेवा में उपस्थित करता हूँ।

भवदीय

वामन चतुर्वेदी

तत्व विभाग

अथ प्रथम तरंग

तावत गर्जन्ति शास्त्राणि जम्बुका: विपिने यथा नगर्जंति महाकायो यावद वेदान्त केशरी।

अथ साधन चतुष्टय

हे गुरो प्रथम साधन चतुष्टय को बता दिये जिससे साधक पूर्ण ज्ञान धिकारीहोजाय।

श्री गुरु कहते हैं।

दोहा

अविनाशी आतम अचल जग जातैं प्रतिकूल।
वैसो ज्ञान विवेक है सब साधन का मूल ॥१॥
ब्रह्म लोक लों भोग जो चहै सवन का त्याग।
वेद अर्थ ज्ञाता मुनि कहत ताही वैराग ॥२॥
मन विषयन से रोकनो समतेहि कहत सुधीर।
इन्द्रियगण को रोकनो दम भाषत बुध वीर ॥३॥
सत्य वेद गुरु वाक्य है श्रद्धा अस विश्वास।
समाधान याको कहत मन विक्षेप प्रनाश ॥४॥
आतप शीत क्षुधा तृष्णा इनके सहन स्वभाव।
ताहि तितिक्षा कहत हैं कोविद मुनिवर राव ॥५॥

ब्रह्म प्राप्ति अरु बन्धकी हानि मुदा की रूप।
ताकि चाह मुमुक्षता भाषत मुनिवर भूप ॥६॥
अन्तरंग यह आठ हैं यज्ञादिक वहि रंग।
अन्तरंग धारे रहे वहिरङ्गन के संग ॥७॥

इनका अर्थ सुगम है इसलिये विचार लेना चाहिये।

इति साधनचतुष्टय कथन नाम प्रथम तरंग।

अथ द्वितीय तरंगः

शिष्य बोला हे गुरो इस पृथ्वी पर जो जन्म लेता है और अपने व्यवहार में लगकर सारी जिन्दगी बिता देता। कोई कोई ईश्वर की भक्ति और शुभ कर्म करता है सो क्या कारण है।

गुरु बोला—श्रवण करो सब के नेत्र की दृष्टि तुल्य नहीं हैं किसी की दृष्टि दूर तक जाती है किसी की दृष्टि समीप के ही वस्तुओं को देखती है और कोई पुरुष समीप दूर को देखता है और दोनों में अन्तर को देखता है। इसी तरह जिसको समीप में ही देख पड़ता है वह यहीं तक शरीर के भोग भोग कर बाल बच्चों स्त्री आदि के सब व्यवहार पर्यन्त तक देखता है। आगे परलोक तक उसकी दृष्टि नहीं जाती यहां ही कुसंग में परके भोग में अशक्त रहकर समय बिता देती है। प्रथम

तो कार्य से हो अवकाश नहीं रहता त्वचा इन्द्रिय से स्त्री के साथ करता है और नेत्रेन्द्रिय से नृत्य आदिक देखता है श्रवणेन्द्रिय से अनेक प्रकार के शब्द सुनता है। घ्राणेन्द्रिय से अनेक प्रकार के वस्तुओं को सूंघता है। रसना रूप इन्द्रिय से अनेक पदार्थों का शुद्ध अशुद्ध स्वाद को जानता है। इन विषयों की प्राप्ति के लिये धन, बल, रूप और विद्या के व्यापार की कामना करता है। जब कामना में बाधा परता है तब क्रोध उतपन्न होता है तब उन विषयों की अप्रापति होने से बहुत ही अनिष्ट करना पड़ता है तब बुद्धि भ्रान्त हो जाती है इसलिये अनेक प्रकार के पाप कर्म करता है। जिन पापों के फल को भोगने के लिये यमपुरी जाना पड़ता है। छोटे बड़े पापों के मोताबिक छोटा बड़ा नरक भी मिलते हैं। नरकों का भोग समाप्त होने पर बीश लाख संख्या वाले स्थावर योनि में किसी का शरीर धारण करना पड़ता है ततपश्चात् नव लाख जाति वाला जलचरों की जाति में जाना पड़ता है। उसके बाद ग्यारह लाख कीड़ों की योनि ततपश्चात दस लाख जाति पक्षीयों की योनि इसके बाद तीसलाख जाति वाले चतुष्पदों की योनि उसके बाद चार लाख जाति वाले मनुष्यों की योनि में जन्म लेना पड़ता है प्रथम तो अति नीच जाति जिसका जल नहीं चलता है उसके बाद शुद्र के यहां जन्म होता है इसके पीछे क्र से वैश्य क्षत्रिय तथा ब्राह्मण के यहाँ

जन्म होता है ब्राह्मण के यहां जन्म लेते ही एक पैर स्वर्ग को उठता है अगर अच्छा कर्म करे तो दूसरा पैर भी स्वर्ग को उठता है और अनिष्ट कर्म करते रहने पर पहला पैर भी उतर जायेगा हे प्रिय शिष्य बहुत दिनों के बाद मनुष्य शरीर प्राप्त किया है अपने को संभारो संभारो जागो जागो स्त्री हो या पुरुष अथवा कोई वर्ण आश्रम होय अपने अपने धर्म पर रह कर भगवत पूजन करो ईश्वर का भजन करो जागो जागो।

॥ इति समीप दृष्टि कथन नाम द्वितीय तरंग ॥

अथ तृतीय तरंगः

अथ दूर दृष्टिः

हे शिष्य अब दूर दृष्टि वालों का वृत्तान्त को कहता हूँ इस संसार में बहुत पुरुष धनवान और सुखी हैं और बहुत पुरुष अनेक प्रकार के दुःख में पड़े रहते हैं इसका क्या कारण है। कोई पण्डित से पूछना चाहिये इतने ही में एक विद्वान पण्डित समीप में आगये उससे नम्रता पूर्वक पूछा गया कौन कर्म करने से लोक तथा परलोक में सुख मिलता है। पण्डित जी कहने लगे हे प्रिय महाशय सुनिये मैं कहता हूँ सुनो—दान करने से जहां जिस योनि में रहता उसको सुख मिलता है॥

तपस्य करने से बल और राज्य की प्राप्ति होता है सुपात्र ब्राह्मण को भोजन कराने से अत्यन्त पुण्य होता है जिस पुण्य से कभी दुःख नहीं होता है यज्ञ करने से राज्य प्राप्त होता है जो पुरुष दूसरे के किये गये यज्ञ में सामिल होता तपस्या करने से बल और राज्य की प्राप्ति होती है सुपात्र ब्राह्मण को भोजन कराने से अत्यन्त पुण्य होता है जिस पुण्य से कभी दुःख नहीं होता है यज्ञ करने से राज्य प्राप्त होता है जो पुरुष दूसरे के किये गये यज्ञ में सामिल होता है वह भी सुख का भागी होता है जो तीर्थ करता है सो अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त करता है।

जो किसी भी वस्तु की कामना करके तीर्थ करता है उसकी सभी कामनायें पूर्ण होती है इसके लिये अनेक धर्म हैं। संयम के साथ जो मनुष्य प्रेमपूर्वक राम नाम का उच्चारण किया करता है उसे भक्ति मुक्ति तथा आत्मज्ञान की प्राप्ति होता है इसके बाद शिष्य ने पूछा कि आपने जो कहा कि संयम के साथ राम नाम का उच्चारण करना तो संयम किस वस्तु का नाम है। गुरु ने कहा। सुनो- प्रथम तो सत्य बोलना धर्मानुसार धन का उपार्जन करना पवित्र रहना शुद्ध अशुद्ध का विचार करना निषिद्ध भोजन नहीं करना पापी के साथ खान पान तथा और व्यवहार नहीं करना भगवान का कथा वार्ता में प्रेम रखना किसी जीव को दुख नहीं देना पुत्र

पान नहीं करना चिलम बिड़ी शीगरेट का व्यवहार करने को शास्त्र में मना लिखा है प्रमाण विष्णु पुराण में लिखा है कि श्लोक—धुम्रपान रतं विप्रं दान पात्रं करोतियः
सदाता रौरवं याति सविप्रः ग्राम सूकर

माता पिता की सेवा करना गौ का तथा अतिथि का सत्कार करना इन सब कार्यों को संयम करते हैं जो कुछ पुण्य कार्य करना वह अपने मुख से नहीं कहना और उनमें पुण्य का अहंकार नहीं करना। श्री अष्टावक्र ऋषि महाराज जनक जी से कहते हैं कि—

श्लोक

यस्य भिमानः मोक्षेऽपि देहेऽपि ममता तथा।
न चाज्ञानी नवायोगी केवलं दुःख भागसौ॥

जैसे बिना संयम किये रोगी को औषधि का गुण नहीं होता है उसी प्रकार राम नाम रूप औषधि बिना संयम गुण नहीं दिखा सकता क्योंकि सभी मनुष्य राम नाम को जपते हैं लेकिन किसी की दशा सुधरी नहीं दीख पड़ती कारण इसका यही है जो को ऊपर लिखा हुआ है।

श्लोक

यथा पांशुव्याप्ते मलिन मुकुरे श्वेत कपिशौ।
विबिंबौ दृश्येते कथमपि न चालोक शतशः॥
तथात्मा नात्मानौ मल मति विबिंबौ न भवतः।
तत् त्यक्त्वा कामं यजन भजनादिं कुरु हरेः॥

इति व.ह्य दृष्टि (दूर दृष्टि) कथन नाम तृतीय तरंगः ३

अथ चतुर्थ तरंगः ।

अन्तर दृष्टि ।

व्यष्टि दृष्टि तो कह गये अर्थात ब्रह्माण्ड का रूप जो शरीर उसके अन्तर की जा वार्ता है उसको कहता हूँ- अब समष्टि दृष्टि को कहता हूँ ।

एकोऽहम् बहुस्याभिः प्रथम ब्रह्म में यही संकल्प हुआ अर्थात् मैं एक से बहुत रूप को धारण करूं ब्रह्म कैसा है जो सत्य होने के कारण कभी नाश को प्राप्त नहीं होता चैतन्य रूप होने से कभी अचेतन नहीं हो सकता आनन्द रूप होने से कभी दुख को प्राप्त नहीं होता है सर्वव्यापक होने से कभी कोई स्थान उससे खाली नहीं है इन ब्रह्म के भीतर [illegible] ब्रह्माण्ड पूर्ण रूप से स्थित है इसके संकल्प से त्रिगुणात्मक माया प्रकट हो गई रजो गुण, तमोगुण और सत्वगुण इन तीनों गुणों की साम्यावस्था को ही मूल प्रकृति अथवा माया कहते हैं प्रथम तमोगुण से अहंकार हुआ उससे शब्द गुण सहित आकाश उत्पन्न हुआ आकाश से स्पर्शगुण सहित वायु, वायु से रूप गुण सहित तेज तेज से रस गुण सहित जल जल से गंध गुणसहित पृथ्वी की उत्पत्ति हुई ।

प्रकृति—अस्थि मांस नाड़ी त्वचा, रोम ये पाँच वस्तु पृथ्वी से उत्पन्न हुआ । शुक्र, शोणित, मुत्र, लार, स्वेद ये पाँच जल तत्व से उत्पन्न हुआ ।

क्षुदा, पियासा, आलस्य, कान्ति, निन्द्रा ये पांच तेज से हुआ। धावन, प्रसारण, संकोचन, चलन, उच्छलन ये पांच वायु से हुआ। शिरो, अवकाश, कण्ठावकाश, उदरावकाश, हृदयावकाश और कट्यावकाश ये आकश से उत्पन्न हुआ।

आकाश से सत्व अश से श्रोत्र इन्द्रिय रजो अंश से वाक् इन्द्रिय वायु का सत्व अंश से त्वचा इन्द्रिय रजो अंश से पाणि इन्द्रिय अग्नि के सत्व अंश से चक्षु इन्द्रिय रजो अंश से पाद इन्द्रिय जल का सत्व अंश से रसना इन्द्रिय रजो अंश से लिङ्ग इन्द्रिय इस प्रकार दशों इन्द्रियों की उत्पति होती है ये इन्द्रियां स्थूल शरीर पूर्ण रूप से तैयार हो जाता है स्थूल शरीर में ७२००० नाड़ियां रहती हैं।

पांच तत्वों का रजो अंश से पांचो प्राणों की उत्पति होती है उनका नाम इस प्रकार का है। प्राण, अपान, उदान, समान, व्यान इनके समान नामक प्राण नाभि के सामने अन्न चल ठहरता है जहां पर जठराग्नि रहता है वहां रहकर अग्नि को दीप्त करता है व्यान वायु अन्न के रसों लेकर सभी नाड़ियों में पहुँचाता है कहीं कफ की नाडी है कही पीत्त की नाडी है कहीं वार्य और रक्त की बहाने वाली नाडी हैं। उदान वायु कहीं पचने में अजीर्ण हो जाता है तो उपर डकार से शुद्ध करता है। अपान वायु जल के रस निकालने पर मल मूत्र को नीचे फेकता है प्राण वायु जो हृदय में

जो कमल का स्थान है वहाँ से आकर नासिका के द्वारा बारह अङ्गुल पर्यन्त बाहर निकलकर बाहर से शुद्ध वायु को लेकर पुनः हृदय में प्रवेश करताहै प्राणों यही व्यापार है येसब अपने कामों से कभी नही चूकते अगर मनुष्य किसी भी हालत में होय।पांच तत्वों का तत्व अंश से अन्त करण की उत्पति हुई। कार्य भेद सें अन्तः करण चार प्रकार का होताहै जिसका चार व्यापार है मन, बुद्धि, चित और अहंकार हृदय में जो कमल स्थानहै। जहाँ पर आत्मा का निवास स्थान कहा गया है। सबसे ऊपर बुद्धि का स्थान है इसी तत्व के प्रभाव सें प्रकृति जो माया है वह चौराशी लाख योनियों को उतपन्न किया है जब सम्पूण शरीर की रचना होगई किन्तु उसमें चेष्टा करने की शक्ति नही हुई तब ब्रह्मा ने प्राथना करने लगे तुम्हारे रहने के लिये अनेक मन्दिरों की रचना करदियो लेकिन आप उसमे निवास कीजिये।इसके बाद देवता लोगोंने प्रार्थना किये कि हमलोगों के रहने के लिये शरीर में स्थान दीजिये। ब्रह्मा ने जवाब दिया आप लोगों के रहने के लिये इन्द्रिय स्थान है जिस इन्द्रिय आप लोगों को पसंद होय उसइन्द्रिय में आप लोग रहें तब देवताओं ने सूक्ष्म रूप से इन्द्रिय में स्थान बनाकर रहने लगे।नेत्र में सूर्य कान में दिशायें नासिका में अश्विनी कुमार जिह्वा में वरुण मुख में अग्नि त्वचा में वायु हाथों

में इन्द्र लिङ्ग में मित्रा वरुण गुदा में यमराज दोनों पीरों में विष्णु बुद्धि में ब्रह्मा भवन में चन्द्रमा चित्त में वासुदेव अप-चार निवास स्थान बनाया। इस प्रकार दशो इन्द्रियों का एक देवता इन्द्रियों के स्वामी कहे जाते हैं और जो तुलसी कृत रामायण में लिखा है कि चौ०- इन्द्रिय द्वार झरोखा नाना, तहं तहं सुर बैठे हो करि थाना। इसका भी भावार्थ यही है कि जो कि ऊपर लिखा है।

इसके बाद आत्मा ने अपने रहने के योग्य स्थान विचार ने लगे। हृदय कमल में जहां अन्तःकरण रहता है जिसमें सूक्ष्म रूप में बुद्धि रहतीहै उसी स्थान में आत्मा ने सत्चित् आनन्द रूप से ब्रह्मा के आभास रूप होकर बुद्धि में निवास किया। आत्मा जब बुद्धि में निवास किया तब इन्द्रियां चैतन्य हो गयी और सभों ने अपना अपना विषयों को ग्रहन करने लगे। अन्तः करण की चार वृत्तियां है मन बुद्धि चित और अहंकार। आत्मा की सत्ता पाकर बुद्धि निश्चय करतीहै मन संकल्प विकल्प करता है चित् ने अनेक वस्तुओं का चिंतन करता है और अहंकार ने सर्व व्यापक पर मात्मा को एक देशी मानकर अहंकार करता है इन चारों अन्तः करणों ने अपनी शक्ति पर विचार नहीं किया कि हम कौन किसकी शक्ति से बाहरी चेष्टायें करते हैं इसी कारण हमलोग जीवधारी बने हैं। अब मन का विशेष

कार्य करते हैं मन आत्मा की शता पाकर अपने कार्य द्वारा आत्मा को आच्छादित करके अपने को कर्ता भोगता तथा सुख दुःख का भागी मानने लगा। ग्रहण त्याग नरक स्वर्ग का पानेवाला बनगया मन प्रत्येक इन्द्रियों के साथ रहकर सब इन्द्रियों के विषयों को ग्रहण करता है।

प्राणों को छोड़ कर सभी इन्द्रियों को साथ लेकर हृदय में आकर सुषुम्ना नाड़ी में आकर तमोगुण में लीन होकर फिर बाहर नेत्र में आ जाता है सब विचार मनही पर है मन सब भोगों से विरक्त हो जाता है और निवृत्ति मार्ग का अवलम्बन करता है तब संसार से मुक्ति होती है किसी महात्मा ने कहा भी है कि— मनः एव मनुष्याणां कारणं बन्ध मोक्षयोः। इत्यादि रामायण में श्री तुलसीदासजी कहते हैं।

चौ०—ईश्वर अंश जीव अविनाशी चेतन अमल सहज सुख [illegible] री।

भोमःया बस भउ गु[illegible] [illegible] प्रकट [illegible] ई॥

गीता में श्री० भगवा[illegible] [illegible] सन-

सांके मपावक: यदु ग[illegible] [illegible] मम

ममैवांशो जीवलोके [illegible] [illegible] न्द्रि

यट प्रकृतिस्थानि [illegible]

शिष्य ने पूछा [illegible]

शब्द हैं उनका वर्णन करिये गुरुजी कहते हैं सुनो।
अन्नमय प्राणमय मनोमय विज्ञानमय आनन्दमय ये पांच कोश है।

अन्न से बना हुआ और अन्न ही से पालन होने वाला अन्न के कारण रूपणोष्ठधि बोली न होने वाला यह स्थूल शरीर ही अन्नमय कोश है इस शरीर के भीतर पांच कर्मेन्द्रियों के साथ पाँच प्राणों को प्राणमय कोश कहते हैं। प्राणमय कोश के भीतर मनोमय कोश रहता है पाँच ज्ञानेन्द्रियों के साथ मन को ही मनोमय कोश कहते हैं मनोमय कोश के भीतर विज्ञानमय कोश रहता है।

ज्ञानेन्द्रियों के साथ बुद्धि को विज्ञानमय कोश कहते हैं वहां मन नहीं पहुंचता है जहां पर हृदय कमल पर आत्मा का निवास है आत्मा का प्राकास सवत्र फैला हुआ है वहां बुद्धि अज्ञानता से सभी बातों का निश्चय किया करती है इसलिये विज्ञानमय कोश के भीतर आनन्दमण कोश है। पांचो कोश का कारण जो आनन्द मानना तिस आनन्द में जो आनन्द तिसको आनन्दमय कोश कहते हैं आत्मा पांचो कोशों से भिन्न है जिस कोश के साथ रहता है उसी के रूप दिखाई पड़ता है जैसे शुद्ध स्फटिक जिस रंग वाले पदार्थ के साथ रहता है वैसा ही उसका रूप देख पड़ताहै। यथार्थ में इस प्रकार का देखना भ्रमात्मक ज्ञान है।

उसी तरह आत्मा की दशा है। पांचो कोशों का धर्म है कि जन्म मरण अन्नमय कोश का धर्म है, क्षुधा पियासा इत्यादि प्राणमय कोश का धर्म है, मनोमय कोश का धर्म हर्ष शोक है, निश्चय करना विज्ञानमय कोश का धर्म है, आनन्द का अनुभव करना ही आनन्दमय कोश का धर्म है। आत्मा इन पांचो से भिन्न हैं पांचो संचालन कर्ता है ऐसा मानने से मुक्ति मिलती है।

इति सृष्टि कथनं नाम चतुर्थ तरंग

अथ पंचम तरंग

शिष्य पूछता है, कि हे गुरो सभी प्राणियों का शरीर एक ही तत्व का होता है, या उसमें न्यूनाधिकतत्व होते हैं। गुरु! जिनके शरीर में पृथ्वी का अंश आधा रहता है, और आधे में शेष तत्व रहते है। उन प्राणियों का निवास स्थल पृथ्वी है यानी वह पृथ्वी पर बसते हैं। जिस शरीर में जल तत्व आधा रहता है आधे में शेष तत्व रहते हैं उस जीव का निवास स्थान जल में होता है। जिसके शरीर में अग्नि तत्व अधिक रहता है वे प्राणी अग्नि को अधिक चाहते हैं जैसे चकोर इयतादि पक्षी। जिस में वायु तत्व अधिक रहता है वे वायु में अधिक रहते हैं, जैसे पक्षियां। जिस शरीर में आकाश तत्व अधिक रहता है वे आकाश में निवास करते है

जैसे तारा देवता गण इत्यादि।

अब जीव और ईश्वर में जो भेद है जैसा कि गीतादि-सद ग्रन्थों ने कहा है उसको कहता हूँ।

अध्यात्म रामायण में रामचन्द्र ने लक्ष्मण से कहा है।
एकात्म कत्वा जहती न सम्भवे तथा जहल्लक्षणता विरोधतः।
सोऽयं पदार्थो विव भाग लक्षण, युज्येत तपदयो रदोयतः॥

अर्थः रामचन्द्र ने कहा, हे लक्ष्मण वेद प्रति पाद्य सम्पूर्ण भेद रहित एक समान चेतन एवं सत्य है, अत: ब्राह्मण विषयक देश काल वस्तु का परिच्छेद द्वारा जीव और ईश्वर की कल्पना हुई है।

इसका मूल अज्ञान है जिसमें दो शक्तियां हैं एक माया दूसरी अविद्या। माया के तीन गुण हैं। (१) सत्व गुण (२) रजो गुण (३) तमो गुण। इन्हीं तीनों गुणों को देश कहते हैं उत्पति, पालन, और संहार तीन काल हैं। विराट् हिरण्य गर्भ, अव्या कृति तीन वस्तुयें है माया में परिच्छेद हैं। इनमें जो ब्रह्म का आभास है उसकी ईश्वर यह संज्ञा है। इसी प्रकार अज्ञान के अविद्या द्वारा ब्रह्म में देश काल और वस्तु का परिच्छेद है। वहां नेत्र, कण्ठ, हृदय यही देश है। जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, ये काल हैं।

विश्व, तैजस, प्राज्ञ ये वस्तु हैं। इस अविद्या में जो परिच्छेद है। उसमें जो ब्रह्म का अभास पड़ता है वही जीव है। इस प्रकार अज्ञान का आश्रय माया और अविद्या द्वारा शुद्ध स्वरूप सर्वाधिष्टान में जीव एवं ईश्वर दोनों कल्पना है।

जीव ईश्वर में एकता केवल भाग त्याग लक्षण द्वारा हो सकती है।

भाग त्याग लक्षणा के लक्षण।

माया के छः नाम एवं उनके छः कार्य हैं।

माया के नाम (१) प्रकृति (२) अविद्या (३) अज्ञान (४) माया (५) प्रधान (६) शक्ति

(१) अपने से बाहर सारी सृष्टि को रचकर दीखा देना यह प्रकृति का कार्य है। जैसे गीता में लिखा है।

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणाः कर्माणि सर्वशः इति ॥

(२) विद्या के सामने नहीं ठहरना ही अविद्या कार्य है।

(३) अपनी शक्ति से दूसरे के रुप को विस्मृत करा देना अज्ञान का कार्य है।

(४) सत्य में असत्य और असत्य में सत्य का प्रतीति कराना माया का कार्य हैं।

(५) माहा प्रलय में सम्पूर्ण संसार को अपने में रख लेना प्रधान का कार्य है।

(६) अपने ही प्रभाव को प्रदर्शित करना ब्रह्म को ढक लेना, ब्रह्म के आश्रित रहना अनादि एवं अविनाश शक्ति कार्य हैं। इनके प्रभावों से रहित प्रकाश स्वरूप चेतन सर्वान्तर साक्षी एव पूर्ण ब्रह्म को अभिन्न समझना ही भाग त्याग लक्षण है।

जीव ईश्वर भेद कथन नाम षष्ठ तरंग

अथ सप्तम तरंग

प्रश्न ? शिष्य ने कहा, हे गुरो ओंकार का स्वरुप बताने की कृपा करें। गुरुः हे शिष्य सुनो, राम गीता का वचन है।
विश्वं त्वकारं पुरुषं विलापये, दुकार मध्ये बहुधाव्यव स्थितम्।
ततो मकारे प्रविलाप्य तैजसं द्वीतीय वर्णं प्रणवस्य चान्तिमें॥

मकार मप्यात्मनि चिद्धने परे
विलापये आज्ञमवीह कारणम्। सोहम् ऽऽहम सदा विवुक्तिम
द्दिग्यन दृङ् मुक्त सुपाधि कोमलः॥

हे शिष्य ओम् यह तीन मात्रावों से बना है।

अ, उ और म इनका अर्थ इसी प्रकार है (अकार) अ, का जाग्रत अवस्था विश्वाभिमानी आत्मा स्थूल भोग ब्रह्मा देवता वैश्वानी आत्मा वहिः प्रज्ञासत्व गुण प्रधान है। (२) उकार मात्रा की स्वप्नावस्था तैजसाभिमानी विष्णु देवता हिरण्य गर्भ आत्मा विरल भोग अन्तर प्रज्ञा और रजो गुण प्रधान है। मकार मात्रा की अवस्था सुषुप्ति है प्रज्ञाभिमानी रुद्र देवता प्रकृति आत्मा आनन्द भोग तमो गुण प्रधान है।

आकार मात्रा से उत्पन्न वस्तु उकार मात्रा में लय कर देना चाहिये और उकार मात्रा से उत्पन्न वस्तु को मकार में लय करना चाहिये। यह सुषुप्ति है। उस सुबुद्धि चन्द्राकार शक्ति में लय कर सम्पूर्ण शक्ति सहित अर्द्ध मात्रा जो विन्दु है

उसमें लय करो—तब सोहम् सोहम् जैसे सूक्ष्म रुप आत्मा ब्रह्म स्वरुप विन्दु शक्ति द्वारा चन्द्राकार स्वप्न और इससे आप्रत हुआ है। जैसा कि विनय पत्रिका में तुलसीदास ने लिखा है:—

शून्य भिति पर चित्र रंग तनु विनु लिख्यो चितेरो।
धोयें मिटै न मरै भीति दुख पाइय यह तनु हेरे॥

उसी प्रकार ओंकार के अन्तर में ही अखिल संसार का निवास है। अतः ओंकार जप का अत्याधिक महत्व है।

इति ओंकारार्थ कथन नाम सप्तम तरंग

अथ अष्टम तरंग

शिष्य, हे गुरो कारण शरीर किसे कहते मुझे स्पष्ट समझाने की कृपा करें। उत्तर, अज्ञान ही कारण शरीर है। क्योंकि जन्म मरण दुख सुख भाग्याभाग्य की जड़ अज्ञान ही है। अज्ञान ही से कामना का प्रादुर्भाव होता है और कामना से कर्म की उत्पति होता है। इन सबों का कारण अज्ञान ही है। अज्ञान का नाश ज्ञान से होता है। इसलिये ज्ञान प्राप्त का उद्योग मानव मात्र का परम कर्तव्य है।

तत्व विभाग ब्रह्माण्ड रुप शरीर में दीखाया गया है बिना इसके जाने आत्मा और अनात्मा की विवेचना नहीं हो सकती। अपने स्वरुप का ज्ञान ही मुख्य ज्ञान है। और नहीं जानना अज्ञान है। ज्ञान सहकारी बहुत सैनिक हैं और

अज्ञान के सैनिक भी बहुत है। और अपने २ सैनिकों के साथ इस देह रुप किला में राम और रावण जैसा विद्यमान है (अर्थात) अज्ञान अपने सैनिकों के साथ रावण और ज्ञान राम है।

शिष्य पूछता है। हे गुरोः आपने शरीर रुप ब्रह्माण्ड में तत्व विभाग भिन्न २ प्रकार से पृथक २ कर के दीखा दिया है। अब ज्ञान और अज्ञान के विषय में कहिये कि इनके नाश और उत्पति कैसे होती है। यह जीवात्मा किस प्रकार संसार से परि जा सकता है।

चतर गुरु का। शरीर रुप ब्रह्माण्ड ही अवध पुरी और दशों इन्द्रियों को वश करने वाला दशरथ वहां का राजा हैं। वेद गुरु और शुभ कर्म ही मन्त्री सुमन्त है। पुत्रवती स्त्री निवृति और विषय दोष दृष्टि भक्ति और ज्ञान भगवान राम-चन्द्र है जिसकी माता निवृति है और वैराग्य भरत हैं जिनकी जननी विषय दोष दृष्टि है। आत्मा सत्य जग मिथ्या को लक्ष्मण जानना चाहिये। सत्या सत्य विचार ही शत्रुघ्न हैं इनकी माता भक्ति है। विश्वास रुपी विश्वामित्र ने अपने यश की रक्षा के लिये ले गये। लोभ भय और भ्रान्ति ही राक्षसी है। ज्ञान रूपी राम द्वारा जिसका नाश होता हैं।

कामना ही विघ्न करने वाले राक्षस है। जो ज्ञान के समक्ष टीक नहीं सके और यज्ञ की रक्षा हुई। क्षमा रुपी अहिल्या ज्ञान रुपी राम से परिष्कृत हुई। इस संसार रुपी जनकपुर में निर्देहाभिमानी पुरुष ही राजा विदेह हैं।

जिससे शान्ति रुपिणी सीता का जन्म हुआ है।

अहंकार रुपी धनुष ही उसके विवाह के लिये रखा गया है। जिसको तोड़ने के लिये अनेक कामना युक्त पुरुष आये पर नहीं तोड़ सके। इसके बाद ज्ञान रुप रामचन्द्र के अज्ञान रुप धनुष तोड़ देने पर शान्ति रुपणी सीता ने सुलक्षण रुपी माला को रामचन्द्र के गले में पहना कर पिता के भवन में चली गयी। अनन्तर अवधपुरी में खबर दी गयी और दशरथ जी ने अपने पुत्रों के साथ जनकपुर आकर चारो भाईयों का विवाह किये। ज्ञान रुपी राम का विवाह शान्ति रुपी सीता के साथ, विवेक रुपी लक्ष्मण का नम्रता रुपी उर्मिला से, वैराग्य रुप भरत का वृति रुप मारडवी और विचार रुप शत्रुघ्न का विवाह समता रुपिणी श्रुती कीर्ति के साथ विवाह हुआ। विषय प्रेम रुप परशुराम ने राम को भय दीखलाकर पीछे राम के प्रेमी बन गये। अनन्तर विदा होकर रामचन्द्रादिकों ने अवधपुरी में विश्राम किये।

तत्पश्चात् जीव रुपी दशरथ ने ज्ञान रूपी रामचन्द्र को राज्याधिकार देना निश्चित किया ही था कि कैकई ने कहा हे राजन पहले वैराग्य को ही राज्य दीजिये। पीछे ज्ञान को दीजियेगा।

यह सुनकर जीव रुप दशरथ मूर्छित हो गये और ज्ञान रुप राम विवेक रुप लक्ष्मण शान्ति रुपिणी सीता को साथ लेकर अखण्ड रुप रथ पर चढ़कर निर्भय रुप बन को चले

गये। ब्रह्म विद्या रूप गंगा के तीर पर जिज्ञासा रूप केवट से मिले और गंगा पार किये और उपराम कर्म से पार होना रूप भर द्वाज से मिलकर इङ्गला, पिङ्गला, सुषुमातानाड़ी रूपी त्रिवेणी में स्नान कर दम रूप बाल्मिक चित्रकुट रूप कुटस्थ पदं में स्थित हुए। कर्म रूप जयन्ता को अक्रिय रूप बाण से मान भङ्गकर अकर्म रूप अत्रि मुनि के आश्रम पर गये। जहा उनकी स्त्री घृति रुपिणी अनसूइया ने शान्ति रूपी सीता को सतीत्वका उपदेश किया। इसके विकर्म रूप बिराध राक्षस को मार कर ज्ञान स्वरूप रामचन्द्र सम रूपी सुतीक्ष्ण ऋषि के आश्रम पर गये। द्वैता द्वैत रहित ही अगस्त्य मुनि हैं। पति के हृदय रूप पंचवटी में निवास किये। शान्ति भंग करने के लिये दुष्टा तृस्ना ज्ञान रुपी राम के पास आयी और लोभ एवं भय दिखायी फल स्वरूप उसके नाक कान काट लिये गये। और उसके सहायक भी विनष्ट हो गये। इसके बाद अज्ञान रूप रावण से सभी बातें तृष्णा ने कहा। उन्होंने काम स्वरूप मारीच को पठाय काम रूप मारीच को सुवर्णवत नाम एवं रूप को सत्य जानकर उसके पीछे ज्ञान रूप राम दौड़े।

उसी अज्ञान रूप रावण सीता रूपी शान्ति को लेकर भाग चला और मार्ग में धर्म रूप जटायु को मार कर आशा आशा रूपी समुद्र को पार कर शंका रूप लंका को अशोक वाटिका में सीता को रख दिया। अनन्तर ज्ञान रूप राम

शान्ति रुपिणी सीता को अपहृत जानकर वैराग्य रुप लक्ष्मण के साथ जंगलों में खोजना प्रारम्भ किये। उसी बन में सत्संग रुपी हनुमान से भेंट हुई। उनके कथनानुसार सन्तोष रुप सुग्रीव से मित्रता कर लोभ रुप बाली को रामचन्द्र ने मारा और सन्तोष रुप सुग्रीव राजा और अक्रोध रुप अंगद को युवराज बनाया। तत्पश्चात् तितिक्षा रुपिणी तारा को सन्तोष रुप सुग्रीव को समर्पित कर दिया। और स्वयं शुद्ध चित रुप स्फटिक पर निवास किया। अनन्तर सत्संग रुप हनुमान आदिक बानरों को शान्ति रुपिणी सीता की खोज करने के लिये पठाया। सत्संग रुप हनुमान सतोगुण स्वरुप सम्पाति से खबर पाकर आशा रुपी समुद्र को पार कर लंका में चले गये। तदन्तर शंका रुप लंका में शान्ति रुपिणी सीता भेंट हुई। उन्होंने शंका रुप लंका को जलाकर सम्पूर्ण समाचार रामचन्द्र को सुनाये।

रामचन्द्र ने आशा रुप समुद्र में लीला रुप सेतु बांधकर शंका रुप लंका में प्रवेश किया और ज्ञान रुप रामचन्द्र अपने सैनिकों का यथा योग्य युद्ध करने का आदेश दिया।

अज्ञान की सेना का वर्णन

पांच तत्व से बना हुआ इस शरीर रुप ब्रह्माण्ड में चारो तरफ से लगी हुई आशा ही समुद्र है। सत्यासत्य सन्देह रुप का शंका रुपी लंका में अज्ञान रुप रावण निवास है। क्रोध रुप कुम्भकरण उसका भाई शुभाशुभ बुद्धि रुपिणी मन्दोरी

उसकी स्त्री और राग रुप मेघनाद उसका पुत्र है।

अनेक अशुभ कर्म रुप सभी राक्षस हैं। निषिद्ध कर्म रुपणी सम्पूर्ण राक्षसी हैं। सम्पूर्ण अज्ञान रुपी रावण की सेवा करते हुए शुभ कर्मों में विघ्न करते हैं। इस लिये विहित कर्म रुप विभीषण अज्ञान रुप रावण के भय से ज्ञान रुप राम की ओर मिल गये। अज्ञान रुप रावण अपने परिवारिक सेना को देख कर गर्ज कर बोला तुम लोग ज्ञान रुपी राम की सेना को यहाँ प्रवेश मत करने दो और राम के सैनिकों को खा जाओ।

विवेक रुप लक्ष्मण राग रुप मेघनाद के साथ युद्ध करना आरम्भ किया दोनों ओर कुछ काल युद्ध होने के बाद राग रुप मेघनाद ने विवेक रुप लक्ष्मण को मूर्छित किया। इसके बाद ज्ञान रुप रामचन्द्र के मन में बहुत दुःख हुआ। ज्ञान रुप राम ने विवेक रुप लक्ष्मण को जगाया किन्तु लक्ष्मण की मूर्छा नहीं टूटी इसके बाद विहित कर्म रुप विभिषण ने बताया कि लंका में एक सुषेणं नाम का वैध रहता है वह औषधि के द्वारा लक्ष्मण की मूर्छा को दूर कर देगा इसके बाद सतसग रुप हनुमान जी ने सुषेण वैद्य को बुलाया और वैद्य ने तत्व भक्ति रुप औषधि देकर लक्ष्मण की मूर्छा दूर की मूर्छा टूटने पर विवेक रुप लक्ष्मण ने राग रुप मेघनाद को वध किया! ज्ञान रुप रामजी ने क्रोध रुप कुम्भ कर्ण को मार गिराया। इसके बाद अज्ञान रुप रावण की सेना राम की सेना से पराजित हुये युद्ध स्थल को छोड़ भाग पराई। रावण

के बड़े बड़े सैनिक मारे गये रावण ने रामचन्द्र से कहा कि जो वस्तु प्रत्यक्ष रुप में दिखाई पड़ता तथा प्रत्येक इन्द्रियों से ग्राह्य है उस वस्तु को असत्य कैसे कहा जाय। तब रामने कहा देखो अस्ति भाति प्रिय अप्रिय आत्मा के प्रति है। नाम रुप माया के प्रति है ये दोनों ही नाशमान है। जैसे किसी कवि ने कहा है कि:—

रवि कर नीर बहै अति दारुन मगर रूप तेही मांही।
बदन हीन सो ग्रसै चाराचर पान करन जिन जांही॥

इसी तरह तुम सत्य है जैसे अन्धकार देखने में सत्य के समान प्रतीत होता है। किन्तु सूर्य के प्रकाश के सामने उसेकी पता नहीं लगता उसी तरह ज्ञानरुप मेरे सामने तुम है। क्यों कि ज्ञान के सामने अज्ञान कभी नहीं रह सकता इस प्रकार शब्द रुप वाण से रावण को मार दिया। तब विहित कर्म रुप विभिषण को राज्य दिया और विजय पाकर सतसंग रुप हनुमान आदिक बानरों के साथ शान्ति रूपणी सीता को पाकर अपनी राजधानी अयोध्या में आकर अपने भाईयों के साथ राज्य करने लगे। इस प्रकार ज्ञान रुप राम राज्य में शुभ प्रजाओं को सुख प्राप्त होता है।

इति ज्ञाना ज्ञान युद्ध वर्णन नाम अष्टम तरंग।

अथ नवम तरंग

हे गुरो आपने बहुत ही विचित्र और गुप्त कथा सुनाई अब राम नाम के जप का माहात्म कहिये। जिससे भक्त संसार रूप समुद्र से पार हो जाता है।

गुरु महाराज कहते हैं सुनो, जप चार प्रकार का होता है, वैखरी, मध्यमा, पश्यन्ती, उपांशु यहां मन का काम है। मन में उच्च स्वर से नाम को जपे जब तक मन स्थिर होय। तब ओष्ठ को बन्द कर के मध्यमा वाणी से जपे जब तक मन स्थिर होय। तब पश्यन्ति वर्ण का जप करे। जब नासिका से स्वर ऊपर जाय तो रा शब्द का उच्चारण किया करे और नासिका के स्वर से नीचे ऊतरे तब, म, शब्द का उच्चारण करे मन को उसमें स्थिर करे, तब मन की चंचलता छूट जायेगी। तब उपांशु जप करें आप ही आप आत्मा और मन की एकता हो जाएगी। तब संसार का कोई काम शेष नहीं रहेगा। सम्पूर्ण कार्यों की समाप्ति हो जाएगी। जैसा कि निराकार मिंमासा दर्शन में लिखा है सू (भक्तिर्भवति चितैक तानता सू ३ १ दूसरी कोई विधि कहीं भी जप की नहीं लिखी विना विधि पूर्वक जप किये जप का कोई फल नहीं होता अगर भले ही सम्पूर्ण जीवन जप करने ही में बिता दे क्योंकि यह बात प्रत्यक्ष देखी जाती है। इसमें शास्त्र का प्रामाण का कोई आवश्यकता नहीं हैं।

इति राम नाम जप माहात्म्य विचार नाम नवम तरंग

अथ दशम तरंग

शिष्य बोला हे गुरो मैंने सुना है कि सात भूमिकायें होती हैं। उनका पूरा रूप से विस्तार के साथ कहिये श्री गुरु महाराज कहते है। सुनो पहले सातो भूमिकाओं का नाम कहते है १ शुभ इच्छा २ सुविचारण ३ तनुमानसा ४ सत्वाप्रति ५ असशक्ति ६ पदार्था भाविनी ७ तुरीया यही सातो भूमिकाओं का नाम है। अब सातों का लक्षण कहता हूं सुनो प्रेम पूर्वक ईश्वर की कथा श्रवण करना और ईश्वर का गुण गान करना प्रेम पूर्वक पूजनादिक करना यही प्रथम भूमिका कही जाती है।

दूसरी भूमिका

अपने को तथा ईश्वर को और संसार को विचार करते रहना कि तीनो पदार्थों का स्वरूप यथार्थ में क्या है और तत्वतः इनका सम्बन्ध क्या है इसको ही दूसरी भूमिका कहते है।

तीसरी भूमिका

यह शरीर में रहने वाला तथा उसको संचालन करने वाला आत्मा का स्वरूप क्या है, जो आत्मा शरीर में निवास करता है वही इस शरीर को चेष्टावान् बना रहा है अर्थात् शरीर में जो ये चेष्टायें देख पड़ती हैं वे आत्मा की शत्ता से होती है इत्यादि विचार के द्वारा मन को स्थिर करे इसको तनुमानस्य कहते हैं।

चौथी भूमिका

नित्य ही अपने को अनुभव द्वारा निश्चय करे कि मैं शरीरादि से अतिरिक्त ब्रह्म हूँ शरीर नही हूं इसको सत्वापत्ति कहते हैं।

पांचवी भूमिका

आत्म स्वरूप को मन मे दृढ़ निश्चय करके मैं रूपवान हूं, मैं बलवान हूं, सुखी हूं तथा मैं दुःखी हूँ अमुक वर्ण तथा अमुक आश्रम हूं इस देहाभिमान को छोड़ दे इसको असंसक्ति कहते हैं।

छठी भूमिका

विषयाधनादिक पदार्थ जितने बुद्धि द्वारा निर्मित है सभी नाशमान तथा असत्य है केवल आत्मा ही सत्य रूप से नित्य है इसको छठी भूमिका कहते।

सातवीं भूमिका

संपूर्ण संकल्पो को रोक कर अपने को चैतन्य रूप निश्चय करलेना यही ७ वीं भूमिका है। जैसा कि किसी महात्माने कहा है श्लो०

योग वासिष्ठ उतरार्द्ध प्रथम सर्ग में देखो।

अथ एकादश तरंग

अब भक्ति का स्वरूप कहते हैं

भक्ति का दो स्वरूप है, एक भेद तथा दूसरा अभेद। भेद भक्ति उसको कहते हैं जो कि ईश्वर को एक देशी शरीर धारी तथा अपने आत्म स्वरुप से भिन्न मान कर भक्ति की जाती है। उस भक्ति से तीन प्रकार की मुक्तियों में से कोई मुक्ति मिलती है। सालोक्य (अपने इष्टदेव के लोक में जाना) सामीप्य (अपने इष्टदेव के समीप में रहना) सारूप्य (अपने इष्टदेव के स्वरूप हो जाना) भेद भक्ति का यही फल उस भक्त को मिलता है।

अब अभेद भक्ति को कहता हूँ, अपने इष्टदेव को सर्व प्राणियों के शरीर में निवास करने वाला सर्व व्यापक और सब का आत्मा है और मेरा आत्म स्वरूप है। ऐसा जानकर भक्ति करता है। उस भक्त को अभेद भक्ति तथा परा भक्ति भी कहते हैं। उस भक्ति का फल सायुज्य मुक्ति है जो कि भक्त को अवश्य मिलती है। यथार्थ में दोनों ही राम की भक्ति है अपने समझ की बात है।

अब ज्ञान का भेद कहते हैं। ज्ञान दो प्रकार का होता है। एक वृति ज्ञान और एक स्वतः ज्ञान। वृति ज्ञान उसको कहते हैं जो बुद्धि से होता है। पंडित होना सम्पूर्ण व्यवहार को जान लेना पढ़ना विद्या में प्रवीण तथा करना कौशल इत्यादि क्रिया से वृति ज्ञान के द्वारा होती है उसको वृति ज्ञान कहते हैं।

अब स्वतः ज्ञान का स्वरूप को कहते है। सुनो अपना रूप जो चैतन्य आत्मा है वही अन्दर ही में रहता है। सत्य आनन्द रूप ब्रह्म का आभास सभ इन्द्रियों में प्रकाश रूप है। जिसका वही मेरा आत्मस्वरुप है अर्थात वह मैं ही हूं। जो अडंज पिंडज स्थावर और उष्म जो चार प्रकार के जीवों में निवास करता है जो स्वरुप अनेक पदार्थो गत रहने पर एक ही है वह मैं हूं बुद्धि से किये गये प्रपञ्च जो है वही मिथ्या है वह मेरा रूप नही है इस ज्ञान को स्वतः ज्ञान कहने हैं। पर भक्ति जो कही गयी है वह और स्वतः ज्ञान को तो कः रूप एक है और फल भी एकही मिलता हैं

अथ सृष्टि प्रलय को संक्षेप में कहता हूँ।

सर्व व्यापक सर्व शक्ति मान ईश्वर की इच्छा हुई कि मैं एक रूप से अनेक रूप हो जाऊं तब सारी सृष्टि तैयार हो गई जो कि पहले कही गयी है।

जब ईश्वर ने इच्छा की कि मैं अनेक रूप से एक रूप हो जाऊं तब सकल इन्द्रियां अपने कारण रूप तत्वों में मिल गये इसके बाद सूर्य ने अपने संपूर्ण कलाओं के साथ उदय को प्राप्त हुये सम्पूर्ण संसार को भस्म कर दिये। इसके बाद मेघों ने सारी शक्ति के अनुसार वर्षा करना आरम्भ कर दिये सारी पृथ्वी जल में डूब गयी तब पवन ने अपने प्रचण्ड रूप को धारण किया और सब जलों को सुखा दिया। वायु आकाश में आकाश अहंकार में और तमोगुण में और तमोगुण प्रकृति

में प्रकृति प्रधान रूप माया में और सम्पूर्ण चराचरों के साथ पर ब्रह्म में लीन हो गई जिन जीवों की जैसी वासना हृदय में भरी रहती उनकी मुक्ति नहीं कर वासना नुसार जन्म लेना पड़ता है।

जिन जीवों के हृदय में वासना नहीं रहती है किसी प्रकार का संकल्प नही रहता है उन जीवों काल म सर्व व्यापक सर्व साक्षी ईश्वर मे होता है जैसे उपाधि भेद से घटाकाश मठा काश ऐसा भेद होता है यथार्थ में सब कुछ उपादान रूप वट तथः मठ के नही रहने पर महाकाश रूप हो। क्योंकि उसका यथार्थ रूप महाकाश ही है इसी प्रकार चिदाकाश भूताकाश के नाश से चिदा काशही है। इसी तरह सर्व पदार्थ समान्य रूप ब्रह्मही है का रूप है, जो कुछ दृश्य मान माया के रचे हुआ पदार्थ दिख पड़ते है वास्तव में ब्रह्म से किसी काल में भिन्न नहीं होते क्योंकि जब ब्रह्म सर्व व्यापक है कोई स्थान उसमें पृथक नही है कहना ही कसै मुक्ती संगत हो शकता है कि ब्रह्म से भिन्न कोई पदार्थ भी है। तब तो पूछना योग्य होगा कि वह पदार्थ किस स्थान पर रहता है क्योंकि सर्वव्यापक ब्रह्म के बिवा दूसरे पदार्थ के स्थान ही दो सर्व व्यापक वस्तु एकही स्थान में कभी नहीं रह सकते, इसी सिद्धान्त को लेकर सर्वोमान्य उपनिषदों में सर्वं खल्विदं ब्रह्म नेह ना ना स्ति किंचन इसका भावार्थ है कि सभ कुछ ब्रह्म ही है। इस संसार में कुछ भी दूसरा पदार्थ नहीं है।

इति जीव ब्रह्म अभेद निरुपण नाम एकादश तरंग

श्री: रामटहल चौबे उपनाम अटकुआ चौबे तस्यात्मज श्री: विष्णुदयाल चौबे तस्यात्मज श्री मान् ब्रह्म विद्या विशारद वामन चतुर्वेदी कृत तत्व विभाग नाम (आत्म ज्ञान) का पुस्तक है।

मु० विशुनपुरा, पो० दुरोधुर नव्द
थाना बसंतपुर, जिला सारन

काशी के प्रसिद्ध दर्शनिक एवं दण्डी स्वामियों ने इस ग्रन्थ की भूरि २ प्रशंसा की है।

माननीय

प्रधान मन्त्री का सन्देश

?
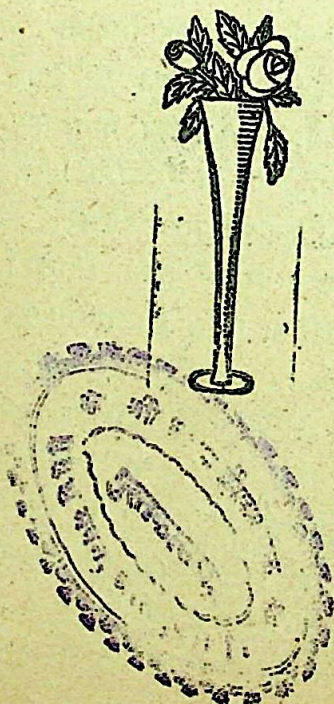
देश के प्रत्येक बच्चे एक-एक ईंट के समान हैं अतः अपने देश को आजाद तथा सुरक्षित रखने के लिये अभी ही से कसरत करने की आदत डालें।

श्री रौनियार सब हितैषी प्रेस महाराजगंज